

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 3 अध्याय 9: ब्रह्मा भगवान् की स्तुति करते हैं

13 September 2026

🙏 पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



सोते हुए भगवान् की नाभि से उत्पन्न कमल पर नवजात ब्रह्मा पहली बार अपने पिता को देखते हैं — और सृष्टि का कार्य स्वयं आरम्भ करने में असमर्थ, वे सम्पूर्ण श्रीमद्भागवत की सबसे व्यक्तिगत और गहन प्रार्थना अर्पित करते हैं।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

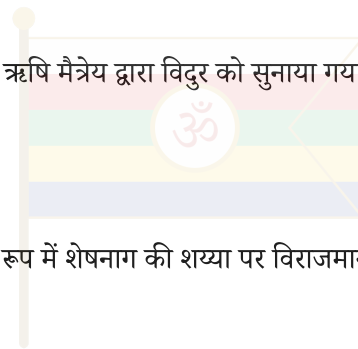
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विङ्गडम् में आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिपूर्ण यात्रा। तृतीय पुस्तक का नवम अध्याय मैत्रेय द्वारा विदुर को सुनाई जा रही सम्पूर्ण कथा के सबसे आत्मीय क्षणों में से एक तक पहुँचता है। पिछले अध्यायों में ब्रह्माण्ड-अण्ड का निर्माण हो चुका है, भगवान् गर्भोदकशायी विष्णु के रूप में उसमें प्रविष्ट हो चुके हैं, और उनकी नाभि से उत्पन्न कमल से,

रजोगुण से प्रभावित तथा सृष्टि-कार्य आरम्भ करने के लिए उत्सुक, ब्रह्मा ने अपनी आँखें खोलकर स्वयं के चारों ओर केवल जल, वायु, आकाश और उस कमल के अतिरिक्त कुछ नहीं पाया जिस पर वे विराजमान हैं। अनिश्चित, ब्रह्माण्ड बनाने के लिए कोई सामग्री न देख पाने के कारण, वे अपना मन उसी भगवान् पर केन्द्रित करते हैं जिनकी नाभि से वे स्वयं प्रकट हुए हैं। इस अध्याय में जो होता है वह ब्रह्मा की अपनी ही उलझन का उत्तर है: कोई योजना नहीं, कोई तकनीक नहीं, अपितु एक प्रार्थना — भागवत के सबसे दीर्घ और सर्वाधिक धर्मशास्त्रीय दृष्टि से समृद्ध स्तोत्रों में से एक, जिसमें नवजात सृष्टिकर्ता स्वीकार करते हैं कि अकल्पनीय युगों के पश्चात् ही उन्होंने वास्तव में भगवान् को जाना है, और वे उसी दृष्टि तथा कृपा की याचना करते हैं जिसके लिए वे स्वयं जन्मे हैं। अध्याय के अन्त में भगवान् का उत्तर उतना ही कोमल है: आश्वासन, शिक्षा, और अन्ततः एक शान्त अन्तर्धान — दिव्य रूप ब्रह्मा की दृष्टि से ओझल होता हुआ, ताकि सृष्टि का कार्य, अब ब्रह्मा के ही हाथों को सौंपा गया, आरम्भ हो सके।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 3 (तृतीय स्कन्ध)
- अध्याय: 9 (नवम अध्याय)
- अध्याय-शीर्षक: ब्रह्मा भगवान् की स्तुति करते हैं
- मुख्य वक्ता: ब्रह्मा (स्तुति में) और भगवान् (उत्तर में) — यह सम्पूर्ण दृश्य ऋषि मैत्रेय द्वारा विदुर को सुनाया गया, राजा परीक्षित को श्रीशुक की कथा के बाह्य परिप्रेक्ष्य के भीतर
- अध्याय के भीतर मुख्य श्रोता: विदुर, मैत्रेय की कथा सुनते हुए
- मुख्य स्थल: प्रलय का कारण-सागर, जहाँ भगवान् गर्भोदकशायी विष्णु के रूप में शेषनाग की शय्या पर विराजमान हैं, और ब्रह्मा उस कमल पर विराजमान हैं जो भगवान् की नाभि से उत्पन्न हुआ है
- मुख्य विषय: पहली बार भगवान् को देखने पर ब्रह्मा का विस्तृत स्तुति-गान (स्तुति), उसके पश्चात् भगवान् का करुणामय उत्तर — ब्रह्मा को आश्वासन देना, भक्ति और आत्म-ज्ञान के मार्ग में उन्हें शिक्षित करना, तथा उन्हें सृष्टि-कार्य का भार सौंपकर स्वयं का व्यक्तिगत रूप दृष्टि से हटा लेना
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 3, अध्याय 9, श्लोक 1–44 (गीता प्रेस क्रमांक)
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण



ब्रह्मा की स्वीकारोक्ति: अनगिनत युगों के पश्चात् भगवान् को जानना

अध्याय आरम्भ होता है ब्रह्मा को पहले से ही प्रार्थना की मुद्रा में पाकर, जिन्होंने पिछले अध्याय में ब्रह्माण्ड बनाने के लिए किसी भी सामग्री की व्यर्थ खोज करने में समय व्यतीत किया और अन्ततः केवल भगवान् को ही देखने योग्य पाया। उनके पहले शब्द दीर्घकालीन अज्ञान की स्वीकारोक्ति हैं, जो एक ऐसे प्राणी के लिए उल्लेखनीय है जो स्वयं सृजित बुद्धियों में सर्वोच्च है: अब, एक अकल्पनीय दीर्घ समय के पश्चात् ही, उन्होंने वास्तव में भगवान् को जाना है। यह लज्जाजनक है, वे कहते हैं, कि देहधारी प्राणी यह पहचान ही नहीं पाते कि भगवान् वस्तुतः कौन हैं — क्योंकि वास्तव में आपके सिवा कुछ भी अस्तित्व में नहीं है; और जो कुछ स्वयं में पृथक् दिखाई देता है, वह भी अन्ततः सत्य नहीं है, क्योंकि जब माया के तीनों गुणों का सन्तुलन विचलित होता है, तब आप ही अनेक रूपों में प्रकट होते हैं।

ब्रह्मोवाच ।

ज्ञातोऽसि मेऽद्य सुचिरान्ननु देहभाजां

न ज्ञायते भगवतो गतिरित्यवद्यम् ।

नान्यत्त्वदस्ति भगवन्नपि तन्न शुद्धं

मायागुणव्यतिकराद्यदुरुर्विभासि ॥ १ ॥

*brahmovāca jñāto 'si me 'dya sucirān nanu deha-bhājāṃ na jñāyate bhagavato gatiṛ ity
avadyam nānyat tvad asti bhagavann api tan na śuddhaṃ māyā-guṇa-vyatikarād yad urur
vibhāsi*

अर्थ: ब्रह्मा ने कहा: बहुत दीर्घ समय के पश्चात् आज मैंने आपको जाना है। यह वास्तव में लज्जाजनक है कि देहधारी जीव भगवान् के वास्तविक स्वरूप को पहचानने में असफल रहते हैं। आपके अतिरिक्त कुछ भी नहीं है; और जो स्वतन्त्र रूप से विद्यमान प्रतीत होता है वह भी अन्ततः वास्तविक नहीं है — क्योंकि आपकी माया के गुणों के परस्पर सम्बन्ध से ही आप यहाँ इस विविध ब्रह्माण्ड के रूप में प्रकट होते हैं। (स्कन्ध 3, अध्याय 9, श्लोक 1)



भगवान् की नाभि से उत्पन्न कमल पर नवसृजित विराजमान, ब्रह्मा पहली बार अपने पिता को देखते हैं और स्वीकार करते हैं कि अकल्पनीय युगों के पश्चात् ही उन्होंने वास्तव में उन्हें जाना है (श्लोक 1-4)।

ब्रह्मा कई श्लोकों तक इसी भाव में आगे बढ़ते हैं, उस रूप का वर्णन करते हुए जो वे अब देख रहे हैं — वह रूप जो आगे आने वाले सैकड़ों अवतारों का बीज है — यह कहते हुए कि यह रूप भगवान् ने पहली बार केवल भक्तों पर अपनी कृपा दिखाने के लिए धारण किया है। वे स्पष्ट करते हैं कि वे इस व्यक्तिगत, दृश्यमान रूप को भगवान् के निर्विशेष, आनन्दमय सत्त्व से किसी प्रकार निम्न या पृथक् नहीं मानते; बल्कि, वे

इसी रूप की शरण लेते हैं, जो — ब्रह्माण्ड की रचना करते हुए भी — उससे परे रहता है, और जो पंच तत्त्वों तथा दस इन्द्रियों — ज्ञानेन्द्रियों और कर्मेन्द्रियों — का स्रोत है। यह, ब्रह्मा कहते हैं, पूर्णतः उनके अपने कल्याण के लिए है कि भगवान् ने स्वयं को इस प्रकार प्रकट किया है; वे बार-बार उन्हें प्रणाम करते हैं जिनकी उपेक्षा केवल इन्द्रिय-सुखों में आसक्त लोग करते हैं, जो इस प्रकार नरक के भागी बनते हैं।

भक्त का हृदय: भय, आसक्ति, और भगवान् के चरणों की शरण

रूप की प्रकृति स्थापित करने के पश्चात्, ब्रह्मा भक्त की स्थिति पर व्यापक चिन्तन की ओर मुड़ते हैं — इस स्तोत्र के सर्वाधिक मनोवैज्ञानिक रूप से गहन अंशों में से एक। भगवान्, वे कहते हैं, अपने भक्तों के कमल-हृदय को कभी नहीं छोड़ते, जो वेदों की वायु द्वारा प्रवाहित उनकी महिमा की सुगन्ध को कानों से ग्रहण करते हैं, उनके हृदय परम भक्ति की डोरियों से उनके चरणों में बंधे हुए। इसके विपरीत, एक साधारण मनुष्य भय, शोक, लोभ, अपमान तथा धन, घर और कुटुम्ब से उत्पन्न असीमित लालच के अधीन रहता है — इनके प्रति एक मिथ्या “मेरेपन” की भावना से ग्रस्त, जो स्वयं समस्त शोक की जड़ है — तब तक ही, जब तक वह उन्हीं चरणों की शरण नहीं लेता, जो अकेले ही समस्त भय से मुक्ति प्रदान करते हैं।

ब्रह्मा उन लोगों को नहीं छोड़ते जो इस मार्ग से मुख मोड़ लेते हैं। जो लोग भगवान् से जुड़े कार्यों — उनकी स्तुति के श्रवण और कीर्तन, जो अकेले ही समस्त पाप का नाश करते हैं — की उपेक्षा करते हैं, वे, वे कहते हैं, एक अशुभ भाग्य द्वारा अपनी बुद्धि से वंचित कर दिए गए हैं; ऐसे अभ्यास से अपनी इन्द्रियाँ हटाकर, वे निरन्तर पापपूर्ण कार्यों में लीन रहते हैं, उनका मन तुच्छतम इन्द्रिय-सुखों के लोभ से ग्रस्त, और तदनुसार दुःखी। और फिर आता है असाधारण, लगभग पितृवत् करुणा का एक श्लोक: ब्रह्मा स्वीकार करते हैं कि उनकी अपनी आत्मा को यह देखकर पीड़ा होती है कि ये ही प्राणी — अभी तक सृजित नहीं हुए, अभी केवल भगवान् के अपने सत्त्व के भीतर सम्भावनाओं के रूप में विद्यमान — बार-बार भूख और प्यास से, शरीर के तीन दोषों से, मौसम की चरम सीमाओं से, परस्पर संघर्ष से, तथा काम और क्रोध की असह्य अग्नि से पीड़ित होंगे। भागवत में संरक्षित एक टिप्पणी इस उल्लेखनीय चित्र की व्याख्या करती है: यद्यपि उस क्षण ब्रह्मा के समक्ष कोई भी जीव विद्यमान नहीं था, क्योंकि सृष्टि स्वयं अभी आरम्भ नहीं हुई थी, फिर भी वे भगवान् के व्यक्तित्व में उनके सूक्ष्म शरीरों को देख सके, और इस प्रकार, प्रभावतः, उनके भविष्य के जीवन को ऐसे पूर्वाभास कर सके मानो वे उन्हें प्रत्यक्ष देख रहे हों।

जब तक कोई मनुष्य स्वयं को भगवान् से पृथक् मानता है — यह पृथक्ता स्वयं भगवान् की माया द्वारा, इन्द्रियों तथा उनके विषयों के माध्यम से रची गई है — तब तक, ब्रह्मा कहते हैं, जन्म-मृत्यु का चक्र उसके लिए कभी समाप्त नहीं होगा; और यद्यपि इस चक्र की अन्ततः कोई वास्तविकता नहीं है, फिर भी यह दुःख का एक निरन्तर स्रोत बना रहता है, क्योंकि इसके माध्यम से मनुष्य अपने ही कर्मों का फल भोगता रहता है। यहाँ तक कि ऋषि-कुलों में जन्मे लोग भी अपवाद नहीं हैं: यदि उनका मन दिन में सांसारिक कार्यों में लीन रहता है और उनकी निद्रा, यद्यपि अस्थिर महत्त्वाकांक्षाओं से निरन्तर विचलित होती है, रात में कोई वास्तविक विश्राम प्रदान नहीं करती, तो वे भी बार-बार जन्म-मृत्यु से गुजरते हैं, उनके प्रयास नियति द्वारा निरन्तर विफल किए जाते हैं।

भक्ति ही मार्ग को प्रकट करती है

चेतावनी से शिक्षा की ओर मुड़ते हुए, ब्रह्मा घोषित करते हैं कि भगवान् तक पहुँचने का मार्ग केवल उनकी स्तुति के श्रवण से ही खोजा जा सकता है — और यह कि भगवान् सच्चे ही उन भक्तों के कमल-हृदय में निवास करते हैं जिनके हृदय भक्ति के अभ्यास से शुद्ध हो चुके हैं। अत्यन्त कोमलता के एक श्लोक में, ब्रह्मा टिप्पणी करते हैं कि भगवान्, अपने भक्तों को प्रसन्न करने के लिए, ठीक उसी रूप को धारण करते हैं

जिसमें प्रत्येक भक्त उनका ध्यान करता है। भगवान्, ब्रह्मा कहते हैं, समस्त प्राणियों के एकमात्र निःस्वार्थ मित्र हैं, प्रत्येक हृदय में विराजमान वास्तविक अन्तरात्मा; और उन्हें प्रसन्न करने वाली वस्तु न तो प्रचुर सामग्री से किया गया स्वार्थपूर्ण पूजन है, अपितु समस्त प्राणियों के प्रति दिखाई गई करुणा है — एक ऐसा गुण, ब्रह्मा विशेष रूप से बताते हैं, जिसे दुष्ट कभी प्राप्त नहीं कर सकते।

इससे ब्रह्मा इस स्तोत्र की मूल व्यावहारिक शिक्षा कह सकते हैं: किसी भी मानव-कर्म का सर्वोच्च पुरस्कार भगवान् की प्रसन्नता जीतना है, चाहे वह कर्म यज्ञ, दान, कठोर तप, अथवा पवित्र व्रतों के पालन के रूप में हो — क्योंकि भगवान् को समर्पित कोई भी धार्मिक कर्म अक्षय पुण्य लाता है, जो कभी नष्ट नहीं होता। विविधता का भ्रम, ब्रह्मा कहते हैं, भगवान् के सत्त्व के तेज से सदैव के लिए निगल लिया गया है, जो स्वयं समस्त ज्ञान का धाम है; और जो लोग मृत्यु के क्षण में, यहाँ तक कि अचेत अवस्था में भी, भगवान् के नामों का उच्चारण करते हैं — जो उनके अवतार, गुणों और चरित्रों का सूचक हैं — वे तुरन्त अनेक जन्मों के पापों से मुक्त हो जाते हैं और उस ब्रह्म के साथ एकत्व प्राप्त करते हैं जो माया के आवरण से परे प्रकाशित होता है।



हाथ जोड़े हुए, ब्रह्मा भक्त की सच्ची शरण पर ध्यान करते हैं: केवल भगवान् के चरण ही हृदय को भय, शोक और जन्म-मृत्यु के अनन्त चक्र से मुक्त करते हैं (श्लोक 5-15)।

ब्रह्माण्ड का वृक्ष रूप भगवान्, और स्वयं काल के रूप में भगवान्

ब्रह्मा आगे भागवत के सबसे स्मरणीय ब्रह्माण्डीय संरचना के चित्रों में से एक प्रस्तुत करते हैं: प्रणाम, वे कहते हैं, उस भगवान् को जो सृष्टि के समय स्वयं को इस ब्रह्माण्ड के वृक्ष के रूप में प्रकट करते हैं। यह वृक्ष प्रकृति से विकसित होता है, जो स्वयं भगवान् में निहित है; यह पहले तीन गुणों — रजस्, सत्त्व और तमस् — में विभाजित होता है, और आरम्भ में तीन महान् तनों के रूप में प्रकट होता है: स्वयं ब्रह्मा, भगवान् विष्णु, तथा कैलास पर्वत पर निवास करने वाले भगवान् शिव — जो क्रमशः सृष्टि, पालन और संहार के लिए उत्तरदायी हैं — इसके पश्चात् यह वृक्ष अनगिनत शाखाओं और उपशाखाओं में विकसित होता है — विभिन्न प्रजापति, मनु, इत्यादि।

ब्रह्माण्डीय संरचना के इस चित्र से, ब्रह्मा काल पर चिन्तन की ओर मुड़ते हैं। भगवान् की पूजा, वे कहते हैं, स्वयं भगवान् द्वारा उस कर्तव्य के रूप में घोषित की गई है जो सच्चा सुख देता है; फिर भी इस कर्तव्य की उपेक्षा करते हुए, अधिकांश मनुष्य निषिद्ध कर्मों में लगे रहते हैं, और काल — सर्वाधिक शक्तिशाली और सदैव सतर्क — उनकी जीवित रहने की आशा को एक क्षण में काट देता है। काल स्वयं, ब्रह्मा निष्कर्ष निकालते हैं, भगवान् द्वारा धारण किया गया एक रूप है; अतः उनका प्रणाम इस नाम से भी भगवान् को है। यहाँ तक कि ब्रह्मा स्वयं, जो सत्यलोक — दो

पूर्ण परार्थों तक, अपने पूर्ण ब्रह्माण्डीय जीवन के पूर्ण अवधि तक, और सभी अन्य लोकों द्वारा सम्मानित सर्वोच्च स्वर्ग — के अधिपति हैं, स्वीकार करते हैं कि वे भी काल से भयभीत हैं, और यह ठीक काल के प्रकोप से मुक्ति पाने के लिए ही था कि उन्होंने एक बार दीर्घ वर्षों तक कठोर तप किया था। उनका प्रणाम, अतः, उन भगवान् को है जो समस्त यज्ञों के अधिपति हैं।

भगवान् के रूप, और भगवान् की योगनिद्रा

ब्रह्मा फिर दिव्य अवतार के रहस्य की ओर मुड़ते हैं। यद्यपि अपने ही आनन्दमय स्वभाव से पूर्णतः तृप्त और इन्द्रिय-सुखों की लालसा से पूर्णतः मुक्त, भगवान् — केवल उन्हीं नैतिकता और सद्गुण के मानदण्डों को बनाए रखने के लिए जो उन्होंने स्वयं स्थापित किए हैं — स्वेच्छा से पक्षियों, पशुओं, मनुष्यों और देवताओं सहित जीवन की प्रत्येक प्रजाति में रूप धारण करते हैं। ब्रह्मा का नमस्कार इस पुरुषोत्तम को, इन सभी रूपों में, अर्पित है।

यहीं इस स्तोत्र में ब्रह्मा उस दृश्य का वर्णन करने की ओर मुड़ते हैं जो स्वयं उनकी आँखों के समक्ष है — कारण-जल पर भगवान् की योगनिद्रा, वह दृश्य जो इस सम्पूर्ण अध्याय को फ्रेम करता है।

योऽविद्ययानुपहतोऽपि दशार्धवृत्त्या

निद्रामुवाह जठरीकृतलोकयात्रः ।

अन्तर्जलेऽहिकशिपुस्पर्शानुकूलां

भीमोर्मिमालिनि जनस्य सुखं विवृण्वन् ॥ २० ॥

yo 'vidyayānupahato 'pi daśārdha-vṛtṭyā nidrām uvāha jaṭharī-kṛta-loka-yātraḥ antar-jale 'hi-kaśipu-sparśānukūlāṁ bhīmormi-mālīni janasya sukhaṁ vivṛṇvan

अर्थ: यद्यपि सामान्य प्राणियों को बाँधने वाली पंचविध अविद्या से पूर्णतः अछूते, आपने भयंकर लहरों से क्षुब्ध जल के मध्य निद्रा का आनन्द लिया है — एक ऐसी निद्रा जिसे शेषनाग की शय्या के कोमल स्पर्श ने सुखद बना दिया — समस्त लोकों को अपने ही उदर में विश्राम के लिए एकत्र करके, इस प्रकार सृजित प्राणियों को यह प्रकट करते हुए कि निद्रा स्वयं, चारों ओर घिरे संकट और उथल-पुथल के मध्य भी, कैसी राहत दे सकती है। (स्कन्ध 3, अध्याय 9, श्लोक 20)



प्रलय के जल के मध्य शेषनाग की शय्या पर भगवान् योगनिद्रा में लेटे हैं, समस्त लोक उनके भीतर विश्राम के लिए एकत्रित हैं, जबकि ब्रह्मा उनकी नाभि से उत्पन्न कमल से यह दृश्य देखते हैं (श्लोक 19-21)।

ब्रह्मा फिर सीधे अपने स्वयं के उद्गम का वर्णन करते हैं: वे स्वयं उसी कमल से उत्पन्न हुए हैं जो भगवान् की नाभि से फूटा है, और यह भगवान् की कृपा से ही है कि उन्हें अब तीनों लोकों की सेवा करने का यह अवसर मिला है, उन्हें सृजित करके। भगवान्, ब्रह्मा टिप्पणी करते हैं, ने सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को एक सम्पूर्ण कल्प की अवधि तक अपने ही उदर में सुरक्षित जमा रखा है — और अब, उनके कमल-नेत्र अभी-अभी खुलने लगे हैं, यह संकेत करते हुए कि उनकी निद्रा, जो स्वयं गहन ध्यान का एक रूप है, समाप्त होने वाली है।

सृजनात्मक दृष्टि के लिए ब्रह्मा की प्रार्थना

इस प्रकार दृश्य स्थापित करने के पश्चात्, ब्रह्मा अपनी वास्तविक याचना करते हैं। भगवान्, वे कहते हैं, समस्त प्राणियों — चर और अचर दोनों — के एकमात्र शुभचिन्तक और मित्र हैं — वास्तव में, उनकी अपनी अन्तरात्मा, प्रत्येक शरणागत के प्रेमी। ब्रह्मा अतः याचना करते हैं कि उनकी अपनी दृष्टि और समझ को उसी ज्ञान तथा अलौकिक शक्ति से युक्त किया जाए जिससे भगवान् सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को आनन्दित करते हैं, ताकि वे, ब्रह्मा, इस ब्रह्माण्ड को ठीक उसी प्रकार सृजित कर सकें जैसा यह बीते हुए कल्प में विद्यमान था। चूँकि भगवान् उन सभी की इच्छाएँ पूर्ण करते हैं जो उनकी शरण लेते हैं, ब्रह्मा आगे याचना करते हैं कि जब वे सृष्टि के इस कार्य को — जो स्वयं भगवान् की सृजनात्मक शक्ति की अभिव्यक्ति मात्र होगा — आरम्भ करें, तब उनका मन भगवान् द्वारा अपनी दिव्य शक्ति देवी रमा के साथ अपने अवतारों के दौरान किए गए प्रत्येक चरित्र की स्मृति से, अनेक दिव्य गुणों को प्रकट करते हुए, भर जाए; इस प्रकार, ब्रह्मा प्रार्थना करते हैं, वे सृष्टि के कार्य से सहज ही जुड़ने वाले अहंकार आदि दोषों से अछूते रह सकें।

ब्रह्मा इस स्तोत्र के इस समापन अंश में स्वयं को उस देवता के रूप में पहचानते हैं जो महत्तत्त्व — भगवान् की अपनी ब्रह्माण्डीय समझ की शक्ति — का अधिष्ठाता है, जो भगवान् की नाभि के सरोवर से उत्पन्न हुआ है, यहाँ तक कि जब भगवान् स्वयं इन जल पर सो रहे थे; वे प्रार्थना करते हैं, अतः, कि जैसे वे इस अद्भुत सृष्टि को प्रकाश में लाने के लिए निकलें, वैदिक शब्दों का उनका उच्चारण विफल न हो। और इस स्तोत्र के

अन्तिम, सर्वाधिक व्यक्तिगत श्लोक में, ब्रह्मा अपनी परम याचना करते हैं: कि अनन्त कृपा से युक्त वह सर्वाधिक प्राचीन पुरुष प्रसन्न होकर अपने कमल-नेत्रों को अत्यधिक प्रेम से भरी मुस्कान के साथ खोलें, और, ब्रह्माण्ड की सृष्टि का कार्य आरम्भ करने के लिए अपनी शय्या से उठकर, अपनी मधुर वाणी से ब्रह्मा के विषाद को दूर करें।

सोऽसावदभ्रकरुणो भगवान् विवृद्ध-
प्रेमस्मितेन नयनाम्बुरुहं विजृम्भन् ।
उत्थाय विश्वविजयाय च नो विषादं
माध्व्या गिरापनयतात्पुरुषः पुराणः ॥ २५ ॥

*so 'sāv adabhra-karuṇo bhagavān vivṛddha- prema-smitena nayanāmburuhaṁ vijṛmbhan
utthāya viśva-vijayāya ca no viṣādaṁ mādhyā girāpanayatāt puruṣaḥ purāṇaḥ*

अर्थ: वही अपार करुणा से युक्त भगवान्, वह सर्वाधिक प्राचीन पुरुष, अत्यधिक प्रेम से भरी मुस्कान के साथ अपने कमल-नेत्र खोलें, और ब्रह्माण्ड की विजय — अर्थात् सृष्टि — को सम्पन्न करने के लिए उठकर, अपनी मधुर वाणी से हमारे विषाद को दूर करें। (स्कन्ध 3, अध्याय 9, श्लोक 25)



अपने स्तोत्र के समापन श्लोक में, ब्रह्मा प्रार्थना करते हैं कि भगवान् प्रेमपूर्ण मुस्कान के साथ अपने कमल-नेत्र खोलें और अपनी मधुर वाणी से उनका विषाद दूर करें (श्लोक 22-25)।

ब्रह्मा मौन हो जाते हैं, और भगवान् उत्तर देते हैं

मैत्रेय फिर एक शान्त परन्तु हृदयस्पर्शी क्षण का वर्णन करते हैं: कठोर तप, पूजन और ध्यान द्वारा अपने पिता को इस प्रकार देखने के पश्चात्, ब्रह्मा ने अपने मन और वाणी की पूर्ण सामर्थ्य के साथ उनकी स्तुति की — और फिर बस मौन खड़े रहे, मानो इस प्रयास से थक गए हों। भगवान् विष्णु, प्रलय के उमड़ते जल के मध्य ब्रह्मा के विषाद को देखकर, और यह जानते हुए कि ब्रह्मा उन लोकों की सापेक्ष स्थिति के विषय में

अभी भी अनिश्चित हैं जिन्हें उन्हें सृजित करना है, अब सीधे उन्हें सम्बोधित करते हैं, मानो उन्हें उनकी अपनी कातरता से बाहर निकाल रहे हों।

मा वेदगर्भ गास्तन्द्रीं
सर्ग उद्यममावह ।
तन्मयापादितं ह्यग्रे
यन्मां प्रार्थयते भवान् ॥ २९ ॥

śrī-bhagavān uvāca mā veda-garbha gās tandrīm sarga udyamam āvaha tan mayāpāditam hy agre yan mām prārthayate bhavān

अर्थ: भगवान् ने कहा: हे वेद-गर्भ ब्रह्मा, आलस्य का शिकार मत बनो — सृष्टि के कार्य के लिए स्वयं को प्रयत्नशील करो। तुम जो कुछ भी मुझसे माँगते हो, मैंने पहले ही आरम्भ से तुम्हारे लिए उसकी व्यवस्था कर दी है। (स्कन्ध 3, अध्याय 9, श्लोक 29)



ब्रह्मा के विषाद को देखकर, भगवान् उन्हें आश्वासन के साथ सम्बोधित करते हैं, उन्हें उनकी अपनी कातरता से बाहर निकालते हुए तथा उन्हें सृष्टि का कार्य सौंपते हुए (श्लोक 26-29)।

भगवान् की शिक्षा: भक्ति, आत्म-ज्ञान, तथा सृष्टि का भार

इसके पश्चात् जो आता है वह एक संक्षिप्त परन्तु गहन शिक्षा है, जो भगवान् स्वयं अपने नवजात पुत्र को सान्त्वना तथा निर्देश देने के लिए कहते हैं। ब्रह्मा को कहा जाता है कि वे पुनः भगवान् को समर्पित मन्त्रों के माध्यम से तप और पूजन करें, और ऐसा करते हुए, वे स्वयं अपने ही हृदय में लोकों को प्रकट होते हुए पाएंगे। भक्ति और एकाग्र मन के साथ, ब्रह्मा भगवान् को स्वयं में तथा सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में व्याप्त पाएंगे, और सभी लोकों तथा सभी जीवों — प्रत्येक देहधारी आत्मा — को भगवान् में विश्राम करते हुए देखेंगे। जिस क्षण एक मनुष्य भगवान् को समस्त प्राणियों

में उपस्थित अनुभव करता है, भगवान् समझाते हैं, जैसे अग्नि प्रत्येक काष्ठ में सुप्त रहती है, वह समस्त भ्रम से मुक्त हो जाता है; और जब वह स्वयं को पंच स्थूल तत्त्वों, इन्द्रियों, गुणों तथा अन्तःकरण से पृथक् — भगवान् के साथ, अपनी ही सच्ची आत्मा के रूप में, एकत्व में — अनुभव करता है, तब वह मुक्ति प्राप्त करता है।

भगवान् ब्रह्मा को आश्चस्त करते हैं कि जब वे अपने पूर्व कर्मों के संचित भण्डार के अनुसार अनगिनत प्राणियों को विकसित करने के लिए निकलेंगे, तब भी उनका मन इस विषय में भ्रमित नहीं होगा, ठीक इसलिए कि वे भगवान् की कृपा प्रचुर मात्रा में धारण करते हैं; रजोगुण, गतिशीलता का सिद्धान्त, ब्रह्मा को — प्रथम ऋषि — बांधेगा नहीं, क्योंकि सृष्टि के विशाल कार्य में लगे रहते हुए भी उनका मन भगवान् में ही स्थिर रहेगा। आज, भगवान् कहते हैं, ब्रह्मा ने वास्तव में उन्हें जान लिया है — एक ऐसा ज्ञान जो अधिकांश जीवों के लिए प्राप्त करना अत्यन्त कठिन है — ठीक इसलिए क्योंकि ब्रह्मा भगवान् को पंच तत्त्वों, इन्द्रियों, गुणों तथा मन से मुक्त समझते हैं।

इस आश्वासन में एक गहन सिद्धान्त भी अन्तर्निहित है। रजोगुण — जो सम्पूर्ण सृष्टि-कार्य को गति देगा — अन्यत्र बन्धन के प्रमुख कारणों में गिना जाता है; इस गुण में किया गया कर्म साधारणतः कर्ता को उसके ही फलों में और गहराई से उलझा देता है। यहाँ भगवान् स्पष्ट कहते हैं कि रजोगुण ब्रह्मा को नहीं बाँधेगा — इसलिए नहीं कि ब्रह्मा किसी प्रकार कर्म से बचेंगे, अपितु इसलिए कि उनका मन उसमें डूबे रहते हुए भी भगवान् में ही स्थिर रहेगा। तात्पर्य स्पष्ट है: किसी आत्मा को बाँधने वाला न तो कर्म स्वयं है, न ही उसका गुण, अपितु वह वस्तु है जिससे कर्म करते समय मन जुड़ा रहता है। भगवान् को केन्द्र मानकर की गई सृष्टि पूजा है; वही श्रम अपने स्वार्थ के लिए किया जाए तो बन्धन बन जाता है (श्लोक 34-35)।

भगवान् फिर स्पष्ट स्नेह के साथ उसी घटना का स्मरण कराते हैं जिसने ब्रह्मा को पहली बार यह सत्य सिखाया था: जब ब्रह्मा, भगवान् के अस्तित्व पर सन्देह करते हुए, कमल की नाल के सहारे जल में उसकी जड़ खोजने निकले थे, तब भगवान् ने ब्रह्मा के अपने ही सत्त्व के भीतर अपना अस्तित्व प्रकट किया था। ब्रह्मा ने भगवान् की कथाओं की महिमा से गुम्फित जो भी स्तुति अर्पित की है, तथा जो भी श्रद्धा उन्होंने कठोर तप के प्रति विकसित की है — यह सब, भगवान् स्पष्ट कहते हैं, स्वयं उनकी अपनी कृपा के कारण है। ब्रह्मा को सफलता प्राप्त हो; भगवान् स्वयं को प्रसन्न घोषित करते हैं, क्योंकि ब्रह्मा ने, संसार को सृजित करने की अपनी उत्सुकता में, भगवान् को गुणों से रहित बताया है, भले ही भगवान् साधारण दृष्टि को गुणों से युक्त प्रतीत होते हों। वास्तव में, भगवान् वचन देते हैं कि वे, समस्त वांछित वरदानों के दाता, किसी भी युग में उस भक्त से शीघ्र ही तथा अत्यन्त प्रसन्न होंगे जो इसी स्तुति को दोहराते हुए उनकी पूजा करता है।

सत्य के ज्ञाता, भगवान् आगे कहते हैं, यह मानते हैं कि उनकी अपनी प्रसन्नता ही — न कि तालाब तथा कुँए खुदवाने जैसे लोकोपयोगी कार्य, न ही अकेले कठोर तप, यज्ञ, दान, योग-अभ्यास, अथवा ध्यान — मनुष्यों द्वारा प्राप्त किए जा सकने वाला सर्वोच्च कल्याण है। भगवान् इस अध्याय के सबसे प्रत्यक्ष आत्मीयता के कथनों में से एक में स्वयं को नियन्ता, समस्त आत्माओं की अन्तरात्मा, प्रियतम से भी अधिक प्रिय, के रूप में पहचानते हैं; अतः, वे कहते हैं, मनुष्य को अपना प्रेम केवल उन्हीं पर स्थिर करना चाहिए, क्योंकि शरीर तथा अन्य सभी वस्तुएँ जो प्रिय प्रतीत होती हैं, वे केवल उनके ही कारण प्रिय हैं। इस शिक्षा को पूर्ण करते हुए, भगवान् ब्रह्मा को उनका दायित्व सौंपते हैं: अब, वे कहते हैं, तीनों लोकों तथा उन सभी प्राणियों को विकसित करो जो मुझमें छिपे हुए हैं, ठीक वैसे ही जैसे वे बीते हुए कल्प में विद्यमान थे, अपने ही व्यक्तित्व के माध्यम से — एक ऐसा व्यक्तित्व जो स्वयं मुझसे उत्पन्न हुआ है, और जो समस्त वेदों का साकार रूप है।

भगवान् अपना रूप अन्तर्धान करते हैं

अध्याय मैत्रेय की एक ही, शान्त कथन-श्लोक के साथ समाप्त होता है। भगवान्, जिनकी नाभि उससे उत्पन्न कमल के चिह्न से युक्त है, और जो प्रकृति तथा पुरुष दोनों के अधीश्वर हैं, इस प्रकार ब्रह्मा — ब्रह्माण्ड के सृष्टिकर्ता — को सृष्टि सम्पन्न करने का साधन प्रकट करके, ब्रह्मा की दृष्टि से अपना ही व्यक्तिगत रूप — जो नारायण नाम से जाना जाता है — अन्तर्धान कर लेते हैं।

तस्मा एवं जगत्स्रष्ट्रे
प्रधानपुरुषेश्वरः ।
व्यजयेदं स्वेन रूपेण
कञ्जनाभस्तिरोदधे ॥ ४४ ॥

maitreya uvāca tasmā evaṁ jagat-sraṣṭre pradhāna-puruṣeśvaraḥ vyajyedaṁ svena rūpeṇa kañja-nābhas tirodadhe

अर्थ: मैत्रेय ने आगे कहा: भगवान्, जिनकी नाभि में कमल है, और जो प्रकृति तथा पुरुष दोनों के नियन्ता हैं, इस प्रकार संसार के सृष्टिकर्ता (ब्रह्मा) को सृष्टि सम्पन्न करने का साधन प्रकट करके, अपना ही व्यक्तिगत रूप दृष्टि से हटा लिया। (स्कन्ध 3, अध्याय 9, श्लोक 44)



ब्रह्मा को सृष्टि का साधन सिखाने के पश्चात्, भगवान् अपने व्यक्तिगत रूप — नारायण — को अन्तर्धान कर लेते हैं, ब्रह्मा को — अब शिक्षित, आश्वस्त और भार-सौंपा हुआ — उस कार्य को आरम्भ करने के लिए छोड़कर जिसके लिए वे जन्मे थे (श्लोक 43-44)।

अध्याय इस प्रकार अपने आरम्भ से बिल्कुल भिन्न भाव पर समाप्त होता है: जो ब्रह्मा की अज्ञान-भरी स्वीकारोक्ति के साथ आरम्भ हुआ था, वह भगवान् के अपने व्यक्तिगत रूप के दृष्टि से हट जाने के साथ समाप्त होता है, जिसने पीछे भ्रम नहीं अपितु एक स्थिर, कृपा-भरा आत्मविश्वास छोड़ा है — ब्रह्मा अब, अन्ततः, सृष्टि के उस कार्य को आरम्भ करने के लिए तैयार हैं जिसका वर्णन आगामी अध्याय में किया गया है।

इस प्रकार तृतीय पुस्तक के महान् एवं गौरवशाली भागवत-पुराण, जो परमहंस-संहिता के नाम से भी जाना जाता है, में नवम अध्याय समाप्त होता है।

इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

1. भगवान् का सच्चा ज्ञान दीर्घ खोज के पश्चात् ही आता है, स्वयं ब्रह्मा के लिए भी। ब्रह्माण्ड के सृष्टिकर्ता स्वयं स्वीकार करते हैं कि अपनी ही गणना से परे अनगिनत युगों के पश्चात् ही उन्होंने वास्तव में अपने पिता को जाना है — यह स्मरण कराते हुए कि दिव्य के साथ आत्मीयता कृपा तथा बढ़ती हुई पहचान का विषय है, न कि स्वतः प्राप्त अधिकार, चाहे किसी का पद कितना भी उच्च क्यों न हो (श्लोक 1)।
2. लाभदायक भेंट नहीं, करुणा ही भगवान् को प्रसन्न करती है। ब्रह्मा स्पष्ट कहते हैं कि भगवान् इतने प्रसन्न नहीं होते जब देवगण स्वार्थपूर्ण इच्छा से, चाहे प्रचुर सामग्री के साथ, उनकी पूजा करते हैं, जितने वे समस्त प्राणियों के प्रति दिखाई गई करुणा से — एक ऐसा गुण, ब्रह्मा टिप्पणी करते हैं, जिसे दुष्ट कभी प्राप्त नहीं कर सकते (श्लोक 12)।
3. भगवान् वही रूप धारण करते हैं जिसे भक्त हृदय में धारण करता है। “आप अपने भक्तों को प्रसन्न करने के लिए ठीक उसी रूप को धारण करते हैं जिसमें वे आपका ध्यान करते हैं” — भागवत के सबसे स्पष्ट कथनों में से एक, दिव्य कृपा की आत्मीय, व्यक्तिगत प्रतिक्रियाशीलता पर (श्लोक 11)।
4. काल के अधिष्ठाता देवता भी काल से भयभीत हैं — क्योंकि काल भी भगवान् ही हैं। ब्रह्मा, दो पूर्ण परार्धों तक सर्वोच्च स्वर्ग के अधिपति, अपने ही काल के भय को स्वीकार करते हैं, और फिर काल को स्वयं भगवान् द्वारा धारण किया गया एक रूप मानकर इस विरोधाभास का समाधान करते हैं (श्लोक 17-18)।
5. मुक्ति स्वयं को पदार्थ से पृथक् तथा भगवान् के साथ एकरूप पहचानने में है। ब्रह्मा को दी गई भगवान् की अपनी शिक्षा प्रत्यक्ष है: स्वयं को तत्त्वों, इन्द्रियों, गुणों तथा मन से रहित, और इसके बजाय भगवान् के साथ, अपनी सच्ची आत्मा के रूप में, एकरूप पहचानना ही मुक्ति है (श्लोक 33)।
6. सृष्टि सौंपी जाती है, कभी स्वयं हथियाई नहीं जाती। ब्रह्मा अपनी पहल अथवा क्षमता से सृजन करने का दुस्साहस नहीं करते; वे प्रतीक्षा करते हैं, प्रार्थना करते हैं, और आश्वासन तथा शिक्षा दोनों प्राप्त करते हैं इससे पहले कि भगवान् उन्हें स्पष्ट रूप से यह कार्य सौंपें — और तभी अपना ही दृश्यमान रूप हटाते हैं, ब्रह्मा को स्वायत्तता के बजाय आत्मविश्वास के साथ कार्य करने के लिए छोड़ते हुए (श्लोक 29-44)।

एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

इस अध्याय के स्वरूप में कुछ ऐसा है जो उस किसी के लिए भी गहन सान्त्वना देता है जो कभी ब्रह्मा की भाँति किसी अत्यन्त विशाल कार्य के आरम्भ में खड़ा हुआ हो। ब्रह्मा कोई सामान्य प्राणी नहीं हैं — वे स्वयं ब्रह्माण्ड के वास्तुकार हैं, समस्त सृष्टि के प्रथम-जात — फिर भी अपने ही अभिषेक के क्षण के प्रति उनकी प्रतिक्रिया आत्मविश्वास नहीं अपितु स्वीकारोक्ति है, योजना नहीं अपितु प्रार्थना है। वे अपने ही दीर्घकालीन अज्ञान की सच्चाई कहते हैं, इससे पहले कि वे कुछ भी माँगें। वे एक ही साँस में समक्ष खड़े रूप की महिमा तथा उस रूप की करुणा के लिए अपनी स्वयं की आवश्यकता, दोनों का वर्णन करते हैं। और जब उत्तर आता है, वह किसी तकनीकी समाधान के रूप में नहीं अपितु आश्वासन के रूप में आता है, सीधे, व्यक्ति से व्यक्ति को कहा गया: निराश मत हो; जो तुमने माँगा है वह पहले ही व्यवस्थित हो चुका है; मेरी कृपा पहले ही

तुम्हारे पास प्रचुर मात्रा में है। इस आश्वासन के पश्चात् ही भगवान् अन्तर्धान होते हैं, अब ब्रह्मा पर विश्वास करते हुए कि वे कार्य करेंगे। सम्भवतः यही इस अध्याय की शान्त शिक्षा है — कि किसी भी महान् कार्य के लिए तैयारी आत्म-निर्भरता में नहीं, अपितु ईमानदार स्वीकारोक्ति तथा कृपा की धैर्यपूर्ण प्रतीक्षा की इसी मुद्रा में आरम्भ होती है।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज, जो भी कार्य आपको, अपने ही छोटे रूप में, ब्रह्मा को सृष्टि जितना ही विशाल तथा अनिश्चित प्रतीत हुआ होगा, आरम्भ करने से पूर्व, रुकें और अपने स्वयं के न-जानने की एक ईमानदार स्वीकारोक्ति अर्पित करें — विफलता की स्वीकारोक्ति के रूप में नहीं, अपितु उसी मुद्रा के रूप में जिससे वास्तविक सहायता सम्भव होती है। जिन शब्दों में आपको स्वाभाविक लगे, उन्हीं में उस दृष्टि तथा स्थिरता की याचना करें जो केवल कृपा ही दे सकती है, यह विश्वास करते हुए कि आपने जो भी सच्चाई से माँगा है, वह किसी अर्थ में, पहले ही व्यवस्थित हो चुका है। अपना कार्य आरम्भ करने से पहले, रुकें और शान्तिपूर्वक दोहराएँ: “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।” उस स्मरण को अपनी ही छोटी स्तुति बनने दें — चाहे कितनी ही विनम्र क्यों न हो, उसी प्रार्थना की एक प्रतिध्वनि जिसके साथ ब्रह्माण्ड के अपने प्रथम वास्तुकार ने अपना कार्य आरम्भ किया था।

निष्कर्ष

तृतीय पुस्तक का नवम अध्याय, अनेक अर्थों में, भागवत के सृष्टि-वृत्तान्त का भावनात्मक तथा धर्मशास्त्रीय हृदय है: पूर्व अध्यायों द्वारा प्रस्तुत तन्त्र-वर्णन नहीं, अपितु एक साक्षात्कार — नवजात ब्रह्मा, पहली बार अपने ही अस्तित्व के स्रोत के समक्ष खड़े, चवालीस श्लोकों की स्तुति अर्पित करते हुए जो ब्रह्माण्डीय दर्शन से लेकर भय तथा कृतज्ञता की अत्यन्त व्यक्तिगत स्वीकारोक्ति तक बढ़ती है, और बदले में उनकी हिचकिचाहट के लिए फटकार नहीं अपितु एक पिता का आश्वासन प्राप्त करते हुए। भगवान् का उत्तर, कुछ ही अविस्मरणीय श्लोकों में, भक्ति, आत्म-ज्ञान तथा मुक्ति पर भागवत की कुछ केन्द्रीय शिक्षाओं को समाहित करता है, इससे पहले कि वे अपना व्यक्तिगत रूप अन्तर्धान करके ब्रह्मा को — अब शिक्षित, सान्त्वना-प्राप्त तथा भार-सौंपा हुआ — उस सृष्टि-कार्य को आरम्भ करने के लिए छोड़ दें जिसका पूर्ण वर्णन आगामी अध्यायों में किया जाएगा। यह एक ऐसा अध्याय है जो प्रत्येक पाठक से, चाहे उसके समक्ष कार्य का पैमाना कुछ भी हो, उसी क्रम को देखने के लिए कहता है: ईमानदार स्वीकारोक्ति, सच्ची प्रार्थना, तथा वह शान्त आत्मविश्वास जो कृपा के बोल चुकने के पश्चात् आता है।

श्रीमद्भागवतम् का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जाग्रत करे।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

सन्दर्भ तथा श्रेय

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, सम्पूर्ण), तृतीय पुस्तक, नवम अध्याय, आन्तरिक पृष्ठ 169–174।
- शृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज़्डम • बिस्वा सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र की आध्यात्मिक मार्गदर्शन और अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, निष्ठापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी तथा लिप्यन्तरण में दिखाए गए हैं और उनके अर्थ सार के रूप में दिए गए हैं। यह किसी एक प्रकाशक के निरन्तर अनुवाद या टीका की प्रतिलिपि नहीं है। किसी भी प्रकाशक के साथ कोई सम्बद्धता या समर्थन निहित नहीं है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-3-chapter-9-brahma-extols-the-lord-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट

